नौ नवम्बर : परिपक्वता का प्रमाण

डॉ॰ विजय अग्रवाल

8 से 10 नवम्बर के 72 घंटों के दौरान जिन लोगों के दिमाग की उंगलियां हिन्दुस्तान की नब्ज का जायजा ले रही थीं, वे पहली बार इस सुखद अनुभव का एहसास कर पाये कि नसों की धड़कनें सामान्य और स्वस्थ गति से उठ और गिर रही थीं। आँखों को चेहरों पर छाई जिज्ञासा तो दिखाई दे रही थी, लेकिन चिन्ता और तनाव नहीं। फिर जब 9 नवम्बर की सुबह अयोध्या जैसे अत्यंत संवेदनशील मामले पर देश की आला अदालत का फैसला आया, देश की नब्ज और चेहरा पूर्ववत ही रहे।

देश के नौजवानों को ऊपर की यह बात बहुत ही सामान्य तथा सतही लग रही होगी। लेकिन उन्हें नहीं, जो अपनी-अपनी जिन्दगियों के अद्र्धशतक पार करके स्वर्ण जयंती की ओर बढ़ रहे हैं। उनको नौ नवम्बर का यह राष्ट्रीय परिदृश्य किसी परीकथा के सुन्दर नन्दनवन की तरह सुहावना तथा सच होते हुए भी काफी अविश्वनीय सा लगा, जिनकी स्मृतियों ने अयोध्या में रामलला के मंदिर का ताला खुलने की, बाबरी मस्जिद के गिराये जाने की तथा इससे पहले धर्म के छोटे-छोटे विवादों पर देश की फिज़ा में बारूद की गंध तथा हवाओं की तड़पन को महसूस किया है।

अलम्मा इकबाल साहब का जन्म 9 नवम्बर को हुआ था, जिनके लिखे गीत 'सारे जहाँ से अच्छा, हिन्दोस्ता हमारा' की शब्द और धुन आज भी भारतीय चेतना के गहरे में समाये हुए है। 9 नवम्बर 2019 के दिन ने दुनिया के सामने इन शब्दों की सच्चाई को पेश करके देश की तारीख में अपने लिए एक उम्दा जगह हासिल कर ली है। और इसमें कोई आश्चर्य नही होगा, यदि भविष्य के इतिहासकार इस तिथि को भारतीय चेतना के एक नये युग में प्रवेश के प्रमाण के रूप में मान्यता दे दें।

दरअसल, सच यही है कि नौ नवम्बर को जो फैसला आया और उस फैसला आने के पहले और उसके बाद भारतीय समाज ने जो प्रतिक्रिया व्यक्त की, वह इस घोषणा का पुख्ता प्रमाण है कि "अब वह परिपक्व हो चुका है।" यदि आप थोड़ी देर के लिए अपनी याद को पीछे ले जाकर सोचें, तो पायेंगे कि यह पूरा दौर धार्मिक प्रमुखों एवं राजनीतिक दलों के कड़वे, भडकाऊ तथा तीखे बायनबाजियों से मुक्त रहा। अखबारों के अक्षर स्याह थे। न्यूज चैनल पर चीख-चिल्लाहट नहीं थी। और सबसे बडे आश्चर्य की बात तो यह कि सोशल मीडिया भी जिम्मेदार बना हुआ था। छोटी-छोटी बातों पर बड़ी-बड़ी उछल-कूद मचाने वाला यह माध्यम भी शांत नजर आया। इस मुद्दे पर लोग आपस में बातें तो खूब कर रहे थे, लेकिन इंसानों की तरह, फाइटरों की तरह नही।

मुझे ऐसा लगता है कि यह वह ऐतिहासिक क्षण है, जिसे हमारे समाजशास्त्रियों एवं मनोविज्ञानियो को एक केस स्टडी के रूप में लेकर बदलते हुये भारतीय मानस के बारे में कुछ ठोस एवं यथार्थवादी निष्कर्ष निकालने चाहिए। इस अध्ययन के केन्द्र में इस एक प्रश्न को रखा जा सकता है कि 'क्या भारत के लोग अब पूरी तरह मेच्योर हो गये हैं।' यहाँ 'मेच्योरिटी' का संबंध मनोविज्ञान की इस परिभाषा से है कि क्या अब हम लोगों ने भावनाओं के आवेश में आने से इंकार कर दिया है ? क्या अब हम सब समय, स्थान और परिस्थितियों पर तर्कपूर्ण तरीके से विचार करने के बाद प्रतिक्रिया करने की 'इमोशनल इंटेलीजेंस' (भावनात्मक बुद्धिमत्ता) की स्थिति तक पहुँच गये है ? "रामचरितमानस" के हनुमान यही करते थे। जगह-जगह पर पढ़ने को मिलता है कि "कपि मन किन्ह विचार", या "मन महुं तरफ करन कपि लागा" आदि।

देश ने अपनी इस राजनीतिक समझ और जीवनगत आकांक्षाओं का जीवंत प्रमाण तब दे दिया था, जब वर्तमान दशक की शुरूआत में ही उसने कुछ गैरराजनीतिक युवाओं के द्वारा बनाई गई राजनीतिक पार्टी के हाथों देश की राजधानी दिल्ली की सत्ता सौंप दी थी। भले ही कुछ राजनीतिक विश्लेषक सन् 2014 और 2019 की भारतीय जनता पार्टी की जीत को राष्ट्रवाद की भावना की जीत मानें। लेकिन यह यूरोप की 19 वीं शताब्दी के मध्य का राष्ट्रवाद न होकर अपने अंदर व्यापक जन आकांक्षाओं को समेटे हुए था। यदि ऐसा नहीं होता, तो उसके बाद मध्यप्रदेश, राजस्थान, छत्तीसगढ़, हरियाणा और महाराष्ट्र राज्यों के चुनाव परिणाम लोकसभा के परिणामों को दुहरा रहे होते।

ऐसा नही था कि राजनीतिक दलों ने चुनावों के अपने जाति, धर्म, क्षेत्र तथा लोभ आदि पुराने प्रतिमानों का इस्तेमाल करने में कोई झिझक दिखाई थी। यदि रामरहिम का जहाज वहाँ की तत्कालीन सरकार को चुनाव की नदी पार नहीं करा सका, तो फिल्म 'पद्मावत' को लेकर एक समुदाय विशेष के द्वारा खड़े किये गये। आंदोलन के सामने सर्वोच्च न्यायालय के निर्देशों के बावजूद राज्यों की निरिहता भी राज्स्थान और मध्यप्रदेश में उनको फिर से सत्तारूढ़ नहीं करा सकी। इन घटनाओं के आहटों की उपेक्षा करने वाल पार्टी खारिज कर दी जायेगी, यह संदेश दे दिया गया है।

सबरीमाला मंदिर तथा दरगाहों में महिलाओं के प्रवेश पर लगे प्रतिबंध के विरूद्ध चले आंदोलनों तथा इन आंदोलनों को मिले अन्य समुदायों के भारी समर्थन ने धर्म के मठाधीशों को यह बता दिया है कि 'अब तुम्हारी ही नही चलेगी।' तीन तलाक के खिलाफ बने कानून को मिली राष्ट्रीय सराहना ने कुछ लोगों के विरोधी स्वरों को जिस तरह दबा दिया, वह काबिले तारीफ थी।

और ऐसा केवल नगरों में ही नहीं हो रहा है। देश में आज महिलाओं के लगभग 22 लाख स्वयं सहायता समूह हैं। लगभग 13 लाख महिलायें पंचायतों में प्रतिनिधित्व कर रही हैं। शिक्षा का प्रतिशत तीन-चैथाई के आसपास हो गया है। यानी कि हमारे गाँवों की समझ ने भी करवटें लेनी शुरू कर दी है।

देश की आबादी में आधे की भागीदारी करने वाले युवा आज धर्म और जाति जैसे मसलों से परे जा चुके हैं। उनकी आकांक्षायें अब सीधे-सीधे उनके जीवन की बेहतरी से जुडी हुई आकांक्षायें हैं। नौ नवम्बर 2019 का दिन भले ही राष्ट्रीय चुनावों के परिणामों की घोषणाओं का दिन न हो, लेकिन यह 'राष्ट्रीय आकांक्षाओं की घोषणा' तथा 'आकांक्षाओं की परिपक्वता के प्रमाण' का दिन अवश्य है। और यही वह बात है, जिसके कारण हमारी हस्ती मिटती नहीं है।

डॉ. विजय अग्रवाल